National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 2; Issue 2; May 2017; Page No. 174-176

पाश्चात्य समाजवाद की व्युत्पति के करक तत्व

अखिलेश त्रिपाठी

राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

ईश्वर प्राप्ति के लिए अलग–अलग मार्ग खोजे और बनाये जाते रहे हैं तद्भांति विषमताओं का उन्नमूलन करके समतापरक समाज व्यवस्था के निर्माण के लिए अलग–अलग ढंग से प्रयोग किये गये हैं लेकिन इन सबकी मूल प्रेरणा और लक्ष्य एक ही रहा है। परन्तु समाजवाद की पहली किरण का प्रस्फुटन पाश्चात्य देशों में ही हुआ।[1]

वर्तमान युग को सगर्व ''प्रजातंत्रा'' और ''समाजवाद'' का युग माना जाता है। प्रत्युत राजनीति विज्ञान के अध्येता के लिए विचलित करने वाली समस्या यह है कि समाजवाद शब्द का वास्तव में अर्थ क्या है? समाजवाद जिसे प्रजातांत्रिक समाजवाद, राज्य समाजवाद, विकासवादी समाजवाद, फेबियन समाजवाद, वैज्ञानिक–समाजवाद जैसे अनेक नामों से जाना जाता है।[2] इसी से जुड़ी समस्या यह है कि समाजवाद के विवध रूपों के उपरूप भी हैं, जो एक–दूसरे पर क्रिया–प्रतिक्रिया करने और आपस में टकराने के साथ–साथ एक–दूसरे के क्षेत्रा का अतिक्रमण भी करते हैं। अतः इस विषय का अध्ययन करने वाले को समाजवाद एक भ्रम का भण्डार दिखायी देता है।[3]

अतः कहा जा सकता है समाजवाद को दो व्यापक रूपों क्रमशः मार्क्सवादी तथा मार्क्सवाद विरोधी आयामों में देख सकते हैं। परन्तु इस तथ्य की दृष्टि से यह कथन प्रस्तुत करना समीचीन नहीं होगा क्योंकि समाजवाद के ये दो रूप भी अपनी प्रस्तुतीकरण व व्याख्या के बिन्दु पर अनेक मतभेदों से भरे हुए हैं। इसके अतिरिक्त समाजवाद के वर्णन में चिन्तन पद्धति के दृष्टिकोण के अनुसार भी पर्याप्त मतभेद होगा।[4]

उदाहरण के लिए समाजवाद को मुख्यतया व्यक्तिवाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया मान सकते हैं। अथवा इसे कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण समझ सकते हैं। इसको समझने की प्रत्येक विधि समाजवाद के अलग–अलग पक्षों पर बल देगी परिणाम स्वरूप एक भिन्न चित्रा प्रस्तुत करेगा। सम्भवतः किसी भी सिद्धान्त से बढ़कर समाजवाद प्रत्येक व्याख्याकार के हाथों में एक पृथक्क मत हो जाता है। जो इसके समर्थकों की मनोवृत्तियों तथा दोषों की प्रकृति के अनुसार भिन्न होता है जो उसके समर्थक को प्रेरणा देता है।[5]

समाजवाद एक ऐसा शब्द है जो आधुनिक काल में सर्वाधिक लोकप्रिय पद बन्ध बन गया प्रत्युत इसका सर्वाधिक दुरुपयोग भी किया गया। अतः इसकी सुनिश्चित एवं सर्वजनीन रूप से स्वीकार्य परिभाषा देकर प्रस्तुत करना अत्यन्त दुष्कर कृत्य है।

समाजवाद को चिन्हित करने में क्रमशः तीन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है–

प्रथमत

समाजवाद एक प्रकार के सिद्धान्त तथा विश्व में सब जगह चल रहे राजनीतिक आन्दोलन दोनों का द्योतक है। अर्थात इसके सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक दोनों पक्ष हैं और इसलिए इसकी समुचित परिभाषा में दोनों को समाहित करना चाहिए।[6]

दूसरे

समाजवाद के दो पक्ष हैं क्रमशः राजनीतिक और आर्थिक। अर्थात यह केवल राज्य और सत्ता पर अधिकार करने की इच्छा नहीं रखता, यह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को भी एक नया रूप देना चाहता है। इसके अतिरिक्त दोनों पक्ष एक–दूसरे से इतनी निकटतापूर्वक गुथे हुए हैं कि अपने वर्णन को समाजवाद के केवल राजनीतिक पक्ष तक सीमित रखना न व्यवहारिक है न वान्छनीय है।[7]

तीसरे

संसार में सब जगह समाजवाद के समर्थक हैं जो अपने–अपने मतों तथा व्यवस्थाओं से इसे समपुष्ट करते हैं। परिणाम यह है कि इस सीमा तक समाजवाद के आश्चर्यचकित करने वाले विविध रूप है कि यह कहना कठिन हो जाता है कि सही अर्थ में समाजवाद का क्या अर्थ है। इन्हीं कठिनाइयों को दृष्टि पथ में रख कर सी0एम0जोड ने समाजवाद के सन्दर्भ में अपने बहुचर्चित वाक्य में अपने विचार प्रकट किये– ''सारतः समाजवाद एक ऐसी टोपी के समान है जो अपना रूप खो चुकी है क्योंकि प्रत्येक इसे पहन लेता है ''।[8]

इन आलोचनाओं–प्रत्यालोचनाओं के अतिरिक्त भी प्रत्येक शब्द के कुछ अनिवार्य निहितार्थ होते हैं जिसके आधार पर परिभाषा का एक सामान्य रूपांक प्रस्तुत किया जा सकता है। इस परिचर्चा क्रम में यह स्मरण रखना युक्ति संगत है कि यहाँ समाजवाद से निहितार्थ समाजवाद के गैर साम्यवादी रूप तक सीमित है– इसी सन्दर्भ तथा परिप्रेक्ष्य में समाजवाद की सामान्य विशेषताओं को चिन्हित कर सकते हैं।

राज्य के कार्यों के बारे में हस्तक्षेप विहीनता (LAISSEZ FAIR) के सिद्धान्त के बिल्कुल विरोधी रूप समाजवाद को कह सकते हैं जो शासन के न्यूनतम के बजाय अधिकतम कार्य क्षेत्रा का समर्थन करता है। इस सिद्धान्त के समर्थक राज्य के प्रति अविश्वास करने तथा इसे बुराई के रूप में देखने, जिसके कार्यों का अधिकतम सम्भव सीमा तक सीमित करना चाहिए के स्थान पर इसे एक सर्वोच्च तथा सकारात्मक भलाई मानते हैं और इसीलिए यह आग्रह करते हैं कि इसका ध्येय लोगों के समान आर्थिक, नैतिक और बौद्धिक हितों को प्रोत्साहन देना है।[9]

समाजवाद के इस रूप के समर्थक राज्य को सकारात्मक भलाई का उपकरण मानते हैं तथा समाज के धनी तथा निर्धन वर्गो के बीच खाई को यथा सम्भव कम करने पर सारा बल देते हैं। इसके लिए उत्पादन के साधनों तथा वस्तुओं के विनमय व वितरण पर सार्वजनिक स्वामित्व, प्रतियोगिता की समाप्ति सामाजिक न्याय आदि के विषय का समर्थन करते हैं। इस सन्दर्भ में किर्कुप का कहना है ''समाजवादी समाज वह समाज है जो उत्पादन के भौतिक उपकरणों पर सार्वजनिक अथवा सामूहिक स्वामित्व, उद्योगों के प्रजातांत्रिक प्रशासन तथा सहकारितापूर्ण श्रम व्यवस्था पर आधारित हो।[10]

जे0सी0 हर्नशा ने समाजवाद के लिए छः कार्यक्रम निर्धारित किये हैं–

1. व्यक्ति की अपेक्षा समाज का उत्थान।
2. मानवीय दशाओं का समाजीकरण।
3. पूंजीवाद का उन्मूलन।
4. भूमिपतिवाद (सामन्तवाद) की समाप्ति।
5. निजी पूंजी का अन्त।
6. प्रतियोगिता का निराकरण।

संक्षेप में समाजवाद वह नीति अथवा सिद्धान्त है जिसका लक्ष्य एक केन्द्रीय प्रजातांत्रिक सत्ता की कार्यवाही से बेहतर वितरण की उपलब्धि तथा उसके अधीन वर्तमान की अपेक्षा पूंजी का बेहतर उत्पादन प्राप्त करना है।[11]

समाजवाद के तर्क

समाजवाद के अनिवार्य तर्कों पर दृष्टिपात करने से समाजवाद के इस रूप के अर्थ को स्पष्टता प्राप्त होती है। गार्नर के अनुसार ऐसे तर्क निम्नलिखित है।

1. आर्थिक संगठन की वर्तमान व्यवस्था में श्रम करने वाला व्यक्ति अपने परिश्रम का पर्याप्त फल प्राप्त नहीं करना उसका अधिकांश भाग पूंजी को बढ़ाने अथवा उनकी सेवाओं के लिए भुगतान में चला जाता है जो श्रम का नियोजन तथा निर्देशन तथा निरीक्षण करते हैं अथवा यह सट्टे–बाजों या बिचौलियों की जेब में चला जाता है किन्तु श्रमिकों को बहुत कम भाग मिलता है, जो वास्तविक उत्पादक है।
   संक्षेप में वर्तमान व्यवस्था के अधीन धनवानों के हितों में समाज का संगठन किया जाता है तथा इससे धन एवं अवसर की गम्भीर असमानताएं पैदा होती हैं।
2. उत्पादन के साधनों पर थोड़े से लोगों का एकाधिकार कायम होता जा रहा है जो जनता का शोषण करते हैं। अतः राज्य को सम्पूर्ण भूमि तथा पूंजी अथवा उत्पादन के साधनों को अपने नियंत्राण में लेना चाहिए जिसका प्रयोग इस समय स्वत्वाधिकारी वर्ग के लाभ के लिए किया जा रहा है।
3. समाजवाद का सिद्धान्त न्याय तथा अधिकार के सिद्धान्तों पर आधारित है। भूमि तथा उसमें छिपी खनिज सम्पत्ति पर सबका अधिकार होना चाहिए, कुछ का नहीं। ये सब मानव जाति की प्रकृति की देन है तथा उनका उपभोग थोड़े लोगों द्वारा नहीं होना चाहिए। जिस तरह सूर्य की धूप वायु अथवा जल का असमान प्रयोग नहीं कर सकते, यह बात उत्पादन के वितरण के सन्दर्भ में भी सत्य है।
4. वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत प्रतियोगिता न केवल अन्याय तथा छोटी प्रतियोगी को कुचलने में प्रतिफलित होती है बल्कि इसमें सेवाओं के दोहरेपन के कारण विशाल आर्थिक अपव्यय तथा फिजूलखर्ची में सन्निहित है। प्रतिबन्धहीन प्रतियोगिता की व्यवस्था के कारण कम वेतन अधिक उत्पादन, सस्ते माल तथा बेरोजगार मजदूरों की दशाएं पैदा होती है। इस प्रकार की स्थिति का एक मात्रा उपचार प्रतियोगिता का निराकरण तथा इसके स्थान पर सहकारिता के सिद्धान्त की स्थापना जिसमें अवसर और पुरष्कार की समानता व उत्पादन की मितव्ययिता के गुण उपलबध होंगे।
5. समाज का सिद्धान्त राज्य की प्रकृति के सावयव सिद्धान्त के अनुकूल है जो यह बतलाता है कि समाज केवल व्यक्तियों की भीड़ नहीं है बल्कि प्राणवान शरीर के समान है, कुछ की अपेक्षा सबका कल्याण प्रधान है तथा अधिकतम लोगों के हित साधन के लिए व्यक्ति विशेष के कल्याण को अनेकों के कल्याण के अधीन होना चाहिए।
6. कुछ क्षेत्राों में राज्य ने प्रतियोगिता को समाप्त करके उसके स्थान पर सहकारिता के सिद्धान्त को शुरू किया तथा एक औद्योगिक प्रबन्धक के रूप में सबकी सफलता प्रदर्शित की जिसमें सभी निष्ठावान तथा विचारशील व्यक्ति पूरी तरह सन्तुलित है।

सामूहिक स्वामित्व तथा प्रबन्ध व्यवस्था पूरी तरह प्रजातांत्रिक है, वास्तव में समाजवाद प्रजातंत्रा का आर्थिक अनुपूरक भाग है यह नैतिक तथा उपकारवादी दोनों सिद्धान्तों पर आधारित है तथा यही एकमात्रा व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत उत्पादन की सफलता तथा न्याय की प्राप्ति हो सकती है तथा व्यक्तिगत चरित्रा के समग्र सामनजस्य पूर्ण विकास के ध्येय को साकार किया जा सकता है।[12]
राजनीति विज्ञान के वैचारिक क्षितिज पर एक विचारधारा के रूप समाजवाद 19वीं शताब्दी में पुष्पित एवं पल्लवित हुई। शाब्दिक व्युत्पत्ति की दृष्टि से राबर्ट ओवन एवं उनके विचार का पक्ष पोषण करने वाले अनुयायियों के लिए समाजवादी शब्द का प्रयोग किया गया।

विश्व में प्रथमतः सुदूर यूरोप की धरती पर यूनान में ज्ञान त्रायी (सुकरात, प्लेटो, अरस्तू) की सशक्त दीपशिखा प्लेटो तथा उसके विख्यात ग्रन्थ ''रिपब्लिक'' में समाजवाद के कुछ तथ्यों को समाहित किया गया। इसीलिए कुछ विचारक प्लेटो को प्रथम समाजवादी मानते हैं। प्लेटो ने अपने आदर्श राज्य के संचालन के लिए जिस प्रकार के प्रशासन की प्रतिस्थापना की उसमें प्रशासन के शीर्ष पर प्रतिस्थापित प्रशासक को व्यक्तिगत सम्पत्ति से वंचित कर दिया गया। तद्भांति प्लेटो ने प्रशासक वर्ग एवं संरक्षक वर्ग को परिवार से वंचित कर दिया, जिसे प्लेटो ने परिवार के साम्यवाद की संज्ञा से अभिहित किया है। परिवार के साम्यवाद के साथ प्लेटो ने प्रस्तावित किया कि शासक प्रवर्ग के बच्चे एवं स्त्रियां सामूहिक होंगी। प्लेटो की साम्यवादी व्यवस्था में व्यवहारिकता का निरा अभाव था। प्लेटो की साम्यवादी व्यवस्था का आधार पूर्णरूपेण दार्शनिक था। परन्तु प्लेटो की साम्यवादी योजना ने मध्य युग एवं आधुनिक युग के विचारकों को गहरे रूप से अनुप्राणित किया।[7]

राजदर्शन के इतिहास में उपयोगितावाद, आदर्शवाद, वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक विचारधाराओं के उपरान्त समाजवाद ने 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक किसी भी विचारधारा की अपेक्षा अधिक हलचल उत्पन्न कर दी। इस हलचल की भाव तरंगे 20वीं शदी को अपने विचारों से ओत–प्रोत किये हुए थी। फलतः 20वीं शताब्दी समाजवाद की शताब्दी बन गयी। 20वीं शताब्दी में यह किसी न किसी रूप में यह संसार के करोड़ों लोगों का युग–धर्म बन गया। दुनिया के किसी भी देश की राजीनतिक व्यवस्था में समाजवाद एक सशक्त पक्ष बन गया। समाजवाद 20वीं शताब्दी की आवाज बन गयी। समाजवाद वैज्ञानिक आविष्कार एवं औद्योगिक क्रान्ति से सहयुक्त होकर व्यक्ति एवं सामाजिक जीवन में आमूल चूल परिवर्तन ला दिया।

यदि समाजवाद का शाब्दिक निहितार्थ मनुष्य की समता से लिया जाय तो यह विचार उतना ही प्राचीन है जितनी मानव सभ्यता लेकिन समाजवाद को केवल एक राजनीतिक विचारधारा के रूप में देखा जाय तो यह निश्चित रूप से आधुनिक युग की उपज है तथा इसका आदर्शवादी तथा क्रान्तिकारी रूप आधुनिक वर्ग भेद तथा आर्थिक असमानताओं के परिणास्वरूप उत्पन्न हुआ।

राजनीतिक दृष्टि से यूनानी लोगों ने प्रथमतः राज्य को अधिक अधिकार सम्पन्न बनाया। यूनानी लोग समता के प्रेमी न होकर स्वतंत्राता के अधिक पक्ष पोषक थे।

मध्य युग ने निरंकुश राजतंत्रा की स्थापना की तत्पश्चात् व्यक्ति के जीवन में राज्य ने सार्वाधिक हस्तक्षेप प्रारम्भ कर दिया। यह हस्तक्षेप अपने चरम सीमा पर पहुँच गया। फलतः राज्य को एक

आवश्यक बुराई माना गया। फलतः व्यक्तिवाद की विचारधारा सामने आयी। 18वीं शताब्दी में व्यक्ति की स्वतंत्राता को अधिक महत्ता प्राप्त हुई। राज्य का कार्य क्षेत्रा पुलिस एवं सेना के संगठन तक सीमित हो गया। लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी का अन्त आते–आते व्यक्तिवादी व्यवस्था टूटने लगी। दो विरोधी वर्ग उत्पन्न हो गये एक शोषक वर्ग तथा दूसरा शोषित। वैज्ञानिक आविष्कारों से उत्पादन में वृद्धि हुई किन्तु यह उन्नति उन्हीं लोगों के पक्ष में रही जो विशाल मिलों और कारखानों के स्वामी थे। गरीब अपनी दरिद्रता से और अधिक निस्सहाय बन गये। फलतः समाज दो विपरीत ध्रुवों में विभक्त हो गया। मांग बढ़ने लगी कि व्यक्तिवादी प्रवृत्ति पर राज्य का अंकुश हो तथा उत्पादन तथा वितरण के साधनों पर राज्य का अंकुश हो तथा उत्पादन तथा वितरण के साधनों का राष्ट्रीकरण हो। जनता के इस मांग की अभिव्यक्ति आधुनिक समाजवाद में हुई जो व्यक्तिवादी सिद्धान्त के विरुद्ध राज्य को एक धनात्मक अच्छाई मानकर उसे अधिकाधिक कार्य सौंपना चाहता है। ऐसा इसलिये कि वर्तमान औद्योगिक युग की समस्याओं का समाधान हो सके।

सैद्धान्तिक दृष्टि से व्यक्तिवाद से संघर्ष करने वाला पहला विचारक थामस मूर था जिसने अपनी विश्वविख्यात कृति ''यूटोपिया'' में एक समाजवादी व्यवस्था का चित्रा उकेरा। थामस मूर के बाद समाजवाद के सूत्राधारों में महान फ्रान्सीसी कल्पनावादी विचराक सेंट साइमन फोरियर और उनके अंग्रेज समकालीन विचारक राबर्ट ओवन और कुछ अन्य समकालीन विचारकों की संगणना की जा सकती है।

18वीं शताब्दी में इन विचारकों ने विश्व पटल पर समाजवाद के विकासवादी, अहिंसात्मक शान्तिवादी तथा आदर्शवादी पक्ष पर बल दिया। किन्तु राजनीतिक चिन्तन के क्षेत्रा में कार्ल मार्क्स के अवतरण ने शान्तिपूर्ण समाजवादी धारा को बेगवती क्रान्तिकारी धारा में परिवर्तित कर दिया साइमन, फोरियर तथा ओवन के समाजवाद को मार्क्स ने कल्पनावादी–स्वप्नलोकीय समाजवाद कहकर इसका उपहास किया तथा इसके स्थान पर क्रान्तिकारी हिन्सात्मक प्रणाली का श्री गणेश किया। समाजवाद को स्वप्न लोक से निकालकर वैज्ञानिक आधार प्रदान किया। मार्क्स ने समाजवाद को जन क्रान्ति का रूप प्रदान कर दिया। समाजवाद के विकासवादी और मार्क्सवादी दोनों स्वरूप स्पष्टतया आज के समाज में अभिव्यक्ति पाते हैं। मार्क्सीय समाजवाद के वैज्ञानिक प्रतिपादन के परिणामस्वरूप समाजवादी विचारधारा क्रमशः दो वर्गों में विभक्त हो जाती है क्रमशः मार्क्सवादी समाजवाद एवं विकासवादी समाजवाद।

आधुनिक समाजवादी आन्दोलन समाजवाद के विभिन्न रूपों का सम्मिश्रण है।.. काल्पनिक समाजवादियों के विचारों ने समाजवादी विचारों को अधिक प्रभावित किया है। उनके मस्तिष्क में विश्व को एक नवीन आधार पर संगठित करने की रूप रेखा का प्रादुर्भाव हो गया है। मार्क्सवाद जो समाज के आखथक तत्व पर अधिक बल देता तथा वर्ग विभाजन को समाप्त करने के लिए वर्ग संघर्ष को अनिवार्य मानता है। उदारवादी समाजवाद जो वैधानिक साधनों के माध्यम से समाज के निरन्तर विकास को एक नवीन समाजिकता की ओर ले जाना चाहता है सिन्डिकलीज्म तथा गिल्ड समाजवाद जिसका कार्य उत्पादन कर्त्ताओं को उत्पादित उद्योगों में अधिकार दिलाना है। समष्टिवाद जो

सर्वहारा वर्ग की अधिनायकता का पक्ष पोषक है और पूंजी व्यवस्था का विरोधी है–आदि समस्त रूप हमें वर्तमान समाजवाद में मिलते हैं। इन समस्त आन्दोलनों का उद्देश्य एक ऐसी औद्योगिक तथा सामाजिक प्रणाली का निर्माण करना है, जिसका उद्देश्य लाभ के स्थान पर जन समुदाय की सेवा करना हो और जो उत्पादन तथा वितरण के सामूहिक आधार पर स्थापित हो। वर्तमान समाजवादी प्रणाली सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था के दोष, पूंजी का असमान तथा अन्यायपूर्ण वितरण, औद्योगिक अधिकार की असमानता व जीवकोपार्जन के अनिश्चय को समाप्त कर देना चाहती है। इस परिवर्तन को लाने के लिए समाजवाद के समस्त सम्प्रदाय सर्वहारा वर्ग से अपेक्षा करते हैं। अभी तक विश्व के बहुत से राष्ट्रों में समाजवाद का विकास नहीं हुआ है, परन्तु समाजवादी आन्दोलन तथा उसके दर्शन का राजनीतिक, साहित्य, नैतिकता तथा औद्योगिक व्यवस्थाओं पर अधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है तथा भविष्य की आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं को समाजवादी पद्धति के आधार पर परिवर्तित करते रहने के लिए संघर्षरत हैं। आधुनिक समाज की समस्याएं इतनी जटिल हो गयी है कि समाजवाद के अलावा और कोई व्यवस्था उन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत नहीं कर सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त : जे0 सी0 जौहरी तथा सीमा जौहरी की पुस्तक में सी0 एम0 जोड, पृष्ठ संख्या 514ए स्टर्लिंग पब्लिशर्ज प्रा0 लि0 नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1992ए 1999।
2. आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त : जे0 सी0 जोहरी तथा सीमा जौहरी की पुस्तक में सी0 एम0 जोड, पृष्ठ संख्या 516।
3. आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त : जे0 सी0 जौहरी तथा सीमा जौहरी की पुस्तक में जे0 वी0 गार्नर, पृष्ठ संख्या 516।
4. आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त : जे0 सी0 जौहरी एवं सीमा जौहरी, पृष्ठ संख्या 516।
5. इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, ग्याहरवां संस्करण, चीफ एडीटर – ई0 ई0 प्रास, विलियम बेन्टन सीकेज 1963।
6. आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त : जे0 सी0 जौहरी एवं सीमा जौहरी, पृष्ठ संख्या 520।5
7. महान राजनीतिक विचारक : चन्द्र देव प्रसाद, भारतीय भवन पटना, 1988ए पृष्ठ संख्या 65।
8. पाश्चात्य राजनीतिक विचारों का इतिहास : पी0 डी0 शर्मा, कालेज बुक डिपो जयपुर, 1990ए पृष्ठ संख्या 748।
9. रीडिंग इन रीसेन्ट पोलिटिकल फिलास्फी :जी0 बी0 शा, सम्पादक –एम0 स्मार्क, लन्दन, 1920 पृष्ठ संख्या 436
10. हिस्ट्री आफ फेबियन सोसाइटी : एडवर्ड आर0 पीज, लन्दन, 1920ए पृष्ठ संख्या 1920।
11. रिसेन्ट पोलिटिकल थाट : एफ0 डब्लू0 कोकर, एपलीएनशन सेन्चुरी, न्यू यार्क 1964ए पृष्ठ संख्या 105।
12. माडर्न पोलिटिकल थियरी : सी0 एम0 जोड, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी